ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBBIL04292
RNI REG. NO. UPBBIL/2014/66218 PP. NO.- 486-489

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-11, No.-II, Issues-14 YEAR- Dec. -2019

भारतीय ग्रामीण समाज में जाति एवं व्यवसाय

डॉ0 नौमी प्रिया
ए असिस्टेन्ट प्रोफेसर, समाजशास्त्र, राजकीय महाविद्यालय, सम्भल (उ0प्र0) भारत

Received-18.6.2019, Revised-23.6.2019, Accepted-29.06.2019 E-mail : drnpriya73@gmail.com

सारांश – *जाति व्यवस्था भारतीय समाज की आधारशिला है। इसकी उत्पत्ति कैसे और कब हुई, यह तो विवाद का विषय हो सकता है, लेकिन जाति व्यवस्था के प्रभाव को नकारा नहीं जा सकता। किसी–न–किसी रूप में जाति का प्रभाव व्यक्ति के व्यवहार पर पड़ता है। आज भी ग्रामीण समाज में अधिकांश लोग अपनी जाति व्यवसाय के आधार पर ही जीविकोपार्जन कर रहे हैं, भलेही पूर्व की तुलना में उसके स्वरूप में बदलाव आया हो। लेकिन कुछ व्यवसाय आज भी वैसे ही हैं, जिसे उसे जाति विशेष का ही व्यवसाय माना जाता है। यद्यपि इस क्षेत्र में परिवर्तन जारी है।*

कुंजीभूत शब्द– *सामाजिक स्तरीकरण, व्यवसाय, प्रस्थिति, गतिशीलता, परम्परागत*

सामाजिक स्तरीकरण एक विश्वव्यापी सामाजिक प्रघटना है, जो प्रत्येक समाज में किसी–न–किसी रूप में दृष्टिगोचर होता है। सामाजिक स्तरीकरण मुख्यतः दो प्रकार के होते हैं– ''खुला'' एवं ''बन्द'' स्तरीकरण। खुला स्तरीकरण का उदाहरण ''वर्ग'' है, जबकि बन्द स्तरीकरण का उदाहरण ''जाति'' है। जैसा कि मजूमदार एवं मदान ने जाति को बन्द वर्ग कहा है। मैक्स वेबर ने भी हिन्दू धर्म की व्याख्या में जाति को एक बन्द प्रस्थिति समूह के रूप में परिभाषित किया है। मैकाइवर एवं पेज[1] ने जाति को परिभाषित करते हुए लिखा है ''जब व्यक्ति की प्रस्थिति पूर्णतः पूर्व निश्चित होती है, अर्थात जब व्यक्ति अपनी प्रस्थिति में किसी भी तरह के परिवर्तन की आशा लेकर नहीं उत्पन्न होता, तब वर्ग जाति के रूप में स्पष्ट होता है।

अतः कहा जा सकता है कि जाति जन्म पर आधारित तुलनात्मक रूप से स्थायी संस्तरण है, जो समाज का खण्डनात्मक विभाजन है, जो श्रेष्ठता एवं निम्नता की भावना पर आधारित है। जाति को और भी स्पष्ट रूप में समझने के लिए एन0के0 दत्त, किंग्सले डेविस, जी0एस0 घुरिये एवं एम0एन0 श्रीनिवास द्वारा उल्लेखित लक्षणों को समझना आवश्यक है। उन्हीं लक्षणों में निर्धारित व्यवसाय भी एक प्रमुख लक्षण है। इतना ही नहीं जाति की उत्पत्ति के सिद्धान्तों में एक प्रमुख सिद्धान्त व्यवसायिक सिद्धान्त है, जिसके प्रतिपादक नेसफील्ड हैं। नेसफील्ड[2] के शब्दों में ''व्यवसाय और केवल व्यवसाय ही जाति व्यवस्था के लिए उत्तरदायी है। वे आगे लिखते हैं ''आरम्भ में सभी लोग किसी भी व्यवसाय को कर सकते थे। कालान्तर में धार्मिक कार्य और यज्ञ कर्म इतने जटिल हो गये कि उन्हें सम्पादित करने के लिए विशेष ज्ञान की आवश्यकता हुई। सामाजिक जीवन में धर्म का अधिक महत्व होने के कारण जो धार्मिक कार्य सम्पादित करते थे, वह सर्वोच्च पद पर प्रतिष्ठित हुए तथा ब्राह्मण कहे जाने लगे। प्रशासनिक कार्य को दूसरा स्थान मिला, वह क्षत्रिय हुए। व्यापार और आर्थिक क्रिया करने वाला वैश्य हुआ। एक बार व्यवसाय के आधार पर जब जातियों का निर्धारण हो गया तब बाद में उनके बीच खान–पान सामाजिक सम्पर्क तथा विवाह सम्बन्धी विभाजन भी बढ़ गया।

परम्परागत भारतीय ग्रामीण समाज में जाति और व्यवसाय प्रायः समानार्थक माने गए है, क्योंकि सामाजिक संस्तरण में जाति विशेष का जो स्थान रहा है, वही स्थान उस जाति के परम्परागत व्यवसाय का भी रहा है। इस प्रकार जाति भूमिका ही उसकी 'व्यवसाय भूमिका' बन जाती है। जाति व्यवस्था के अन्तर्गत प्रत्येक जाति का एक निश्चित व्यवसाय होता है, जो पीढ़ी–दर–पीढ़ी हस्तान्तरित होता रहता है। इन जन्म–जात व्यवसायों की प्रतिष्ठा एवं प्रस्थितियां उन जातियों की प्रतिष्ठा एवं प्रस्थितियों से इतनी गुथी हुई है कि उन्हें एक–दूसरे से अलग नहीं किया जा सकता है। अतः वे एक–दूसरे को सुदृढ़ करते हैं और इस तरह जाति और व्यवसाय एक तथ्य के दो पहलू बन जाते हैं। शुद्धता और अशुद्धता के सिद्धान्त के आधार पर जिन जातियों का व्यवसाय अपवित्र वस्तुओं से संबंधित रहा, वहाँ उनको जाति भी अपवित्र एवं तदनुसार निम्नस्तरीय समझी गयी और जिन जातियों का व्यवसाय पवित्र वस्तुओं से संबंधित रहा उनकी जाति भी पवित्र और उच्ची मानी गई।

आज भी ग्रामीण भारत के अधिकांश जातियाँ परम्परागत पेशों को प्रश्रय दे रही है, क्योंकि उन में बदलाव लाना वे धर्म एवं कर्म के विरूद्ध मानते हैं। साथ–ही–साथ भारतीय समाज में सामाजिक गतिशीलता कोई मुक्त प्रक्रिया नहीं है। उदग्र गतिशीलता का विरोध जहाँ उच्च जाति के लोगों के द्वारा होता है, वहीं अद्योनगतिशीलता का विरोध उनकी अपनी ही जाति के द्वारा होता रहा है। ऐसी स्थिति में इन विरोधों से बचने के लिए लोग अपनी जातिगत पेशों को अपनाये रखना ही उचित समझते हैं। ब्लण्ट[3] ने यह स्वीकार किया है कि मध्य एवं उच्च जातियों की अपेक्षा निम्न जातियों में पेशा में बदलाव कम पाए जाते हैं। उसी प्रकार उच्च जातियों की अपेक्षा मध्य जातियों के परम्परागत पेशे में परिवर्तन कम होते हैं। मेयर4 ने रामकेरी गाँव के अध्ययन में यह पाया कि उच्च जातियों की अपेक्षा निम्न जातियों यथा बढ़ई, नाई, लोहार, कुम्हार इत्यादि में परम्परागत व्यवसाय

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-11, No.-II, Issues-14 YEAR- Dec. -2019

सम्बंधी बदलाव कम आए हैं। इस सम्बन्ध में सबसे महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि निम्न जातियों के परम्परागत व्यवसाय में गतिशिलता के कारण उनकी जातिगत प्रस्थिति प्रायः निम्न ही बने रहते हैं, लेकिन उच्च जातियों के परम्परागत व्यवसाय गतिशीलता आने पर ऐसे तथ्य नहीं पाये जाते। इसका मुख्य कारण निम्न जातियों में शिक्षा, प्रशिक्षण एवं आर्थिक साधनों का अभाव है। मेयर ने यह भी पाया है कि उच्च जाति के लोग निम्न जातियों के अधोगामी गतिशीलता को वर्दास्त कर लेते हैं, लेकिन उनकी उच्च गतिशीलता को वे स्वीकार नहीं करते। मेयर के अनुसार रामकेरी गाँव में अगर कोई बढ़ई कृषि–श्रमिक का काम करता है तो उच्च जाति के लोगों को उसके इस पेशे से शिकायत नहीं है, लेकिन वही व्यक्ति अगर अपनी योग्यता के अनुसार सरकारी नौकरी में आ जाता है, तो वे विरोध करने लगते हैं।

एस० सी० दूबे[5] ने भी अपने ग्रामीण अध्ययन के आधार पर पाया है कि अनुसूचित जातियों में आज भी उनकी जाति और व्यवसाय में गहरा संबंध बरकरार है। दूबे के अनुसार इसका कारण अधिक आबादी, भूमिहीनता, शिक्षा का अभाव, सरकारी नौकरियों में उचित प्रतिनिधित्व का अभाव तथा नगरीय एवं राजनीतिक सम्पर्क इत्यादि का अभाव है। के० एन० शर्मा6 ने भी यह स्वीकार किया है कि ग्रामीण समाज में जाति और पेशा में, खासकर निम्न जातियों में, गहरा संबंध पाया जाता है। शर्मा के अनुसार आज भी प्रायः नाई, बढ़ई, लोहार, कुम्हार, धोबी, चमार इत्यादि जातियां अपने जातिगत पेशों से सम्बद्ध है एवं जजमानी प्रथा के अन्तर्गत अपनी सेवा अन्य जातियों को प्रदान करते हैं।

जाति और व्यवसाय प्रस्थिति के अनुरूपता को 1901 की जनगणना रिपोर्ट के आधार पर भी स्पष्ट किया जा सकता है। अनिल भट्ट[7] के अनुसार 1901 की जनगणना रिपोर्ट के अनुसार बंगाल में 80% सरकारी पदों पर उच्च जाति, (ब्राह्मण, वैश्य, एवं कायस्थ) के लोग आसीन रहे हैं, जबकि उनकी जनसंख्या मात्र 1/11 भाग रही है। रिपोर्ट से यह भी स्पष्ट होता है कि मध्य भारत के विभिन्न प्रान्तों में 95% सरकारी पद मात्र पाँच जाति (बाह्मण, राजपूत, भूमिहार, कायस्थ तथा वैश्य) के कब्जे में था, जबकि उनकी कुल आबादी 10% रही है। रिपोर्ट में यह भी स्पष्ट है कि महाराष्ट्र में सबसे अधिक आबादी मराठा, कुन्बी, कोली, लिन्गायत एवं महार जातियों का है, लेकिन उनके एक भी सदस्य सरकारी पद पर नहीं रहे हैं।

के0 एन0 सहाय का मानना है कि परम्परागत पेशों में पर्याप्त लाभ की कमी एवं जीविका के साधनों की अनुपलब्धता के कारण विभिन्न जाति के परम्परागत व्यवसायों में बदलाव आया है। उन्होंने राँची जिला के गाँव के अध्ययन में यह पाया कि बाह्मण, राजपूत, लोहार, कुम्हार, धोबी एवं चमार के परम्परागत पेशा में बदलान का मुख्य कारण उनका अलाभकारी होना है। लेकिन डॉ० तिवारी[8] ने स्वीकार किया है कि ग्रामीण समाज में आज भी जाति और पेशा में सहसंबंध है, लेकिन साथ–ही–साथ उन्होंने गतिशीलता को भी स्वीकार किया है। सच तो यह है कि ग्रामीण अर्थ व्यवस्था आज भी प्रायः कृषि पर आधारित है, जहाँ विभिन्न जातियाँ अपनी जातिगत व्यवसाय से जुड़े हैं एवं जजमानी प्रथा के अन्तर्गत विभिन्न कार्यों में एक दूसरे को सहयोग करती हैं। अपने भोजपुर जिला (बिहार) के केशोपुर ,वं अनिरूदपुर गाँव के अध्ययन में उन्होंने पाया कि केशोपुर में यादव 76.9%, कोयरी 80% एवं कानू तेली, पनेरी, नाई, बढ़ई, सोनार एवं मेहतर अपनी जाति व्यवसाय में शत प्रतिशत लगे हुए हैं। उसी प्रकार अनिरूदपुर गाँव में रहने वाले ब्राह्मण, यादव तथा कोयरी जाति के करीब आधा भाग जाति पेशा में लगे हुए हैं, जब की कुर्मी, तेली, लोहार, गरेड़ी, चमार, धोबी जाति के अधिकांश लोग जाति व्यवसाय में हैं। सबसे आश्चर्य की बात तो यह पाई गई है कि कायस्थ के 90.9% लोग ऐसे थे जिनका व्यवसाय खेती है। अध्ययन से यह स्पष्ट हुआ है कि नयी पीढ़ी में परम्परागत व्यवसाय के मामले में कुछ बदलाव आ रहा है। अनुसूचित जाति के पेशों में ऐसे बदलाव प्रायः श्रमिक के रूप में हो रहे हैं एवं उच्च जातियों का झुकाव नौकरी की ओर है, जबकि मध्य जाति के युवा पीढ़ी व्यापार की ओर आकर्षित हो रहे हैं।

जाति और व्यवसाय संबंधी सही जानकारी प्राप्त करने में डॉ0 रणजीत सिंह[9] द्वारा किए गए दरभंगा जिला के जिला मुख्यालय–दरभंगा नगर, सीमावर्ती गाँव 'ओझौल' एवं दूरस्थ गाँव 'शिरूया' के अध्ययन महत्वपूर्ण है। अध्ययन से स्पष्ट हुआ है कि उच्ची जाति के 36.6% लोग कृषि एवं नौकरी में समान रूप से हैं। कुछ व्यापार करते हैं, जबकि जाति व्यवसाय एवं राजनीति में उनकी संख्या नगण्य है। मध्य जाति श्रेणी में 30% नौकरी में तथा 26.6% कृषि एवं राजनीति में उननी संख्या नगण्य है। 23.3% अपने श्रम पर निर्भर करते हैं। कुछ जातिगत पेशा एवं व्यापार भी करते हैं। निम्न जाति श्रेणी वाले 56.6% श्रमिक है और कुछ ही खेती और नौकरी करते हैं। जाति व्यवसाय, व्यापार और राजनीति में उनकी संख्या नगण्य है।

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् नियोजित विकास के फलस्वरूप अर्थ और समाज का आधुनिकीकरण प्रारम्भ हो गया है। संविधान में पिछड़े वर्गों के पिछड़ापन को दूर करने हेतु सामाजिक, आर्थिक राजनीतिक तथा शैक्षणिक क्षेत्रों में विभिन्न प्रावधान किए गए है तथा इसके अनुरूप केन्द्र तथा राज्य सरकारें विभिन्न कार्यक्रमों को लागू करती रही है। विभेदपूर्ण सुरक्षात्मक सिद्धान्त के अन्तर्गत विभिन्न जातियाँ गतिशील हुई है, जिसके कारण अनुसूचित जातियों एवं अन्य पिछड़ी जाति में उर्द्धवाधर गतिशीलता आई है, जिसका प्रभाव शिक्षा राजनीति

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-11, No.-II, Issues-14 YEAR- Dec. -2019

तथा अर्थ–व्यवस्था पर देखा जा सकता है। बढ़ती जनसंख्या, औद्योगीकरण नगरीकरण, आधुनिक शिक्षा, राजनीति, वेतन, सामाजिक जागरण, नगर सम्पर्क, आवागमन एवं संचार के साधन आदि सामाजिक–सांस्कृतिक कारकों के परिणाम स्वरूप जाति तथा व्यवसाय गतिशीलता को बल मिला है। लेकिन बिहार में किए गए अध्ययनों से यह ज्ञात हुआ है कि निम्न जातियों की उर्द्धवाधर गतिशीलता को अभी भी उच्च जाति के साथ साथ प्रभावशाली पिछड़ी जातियाँ सामान्य रूप से विरोध करते रहे हैं, यहाँ तक की निम्न पिछड़ी जातियों का भी। लेकिन वे उनके अधोगामी गतिशीलता को स्वीकार करते है।

डॉ0 रविन्द्रनाथ के शोध कार्य "ग्रामीण गया जिला में जाति के बदलते स्वरूप के संदर्भ में गया जिला के बेलागंज प्रखण्ड के बरौनी ग्राम पंचायत के अन्तर्गत जाति एवं व्यवसाय से सम्बंधित जो तथ्य प्राप्त हुए उसे निम्न तालिका द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है–

जाति एवं परिवार के सदस्यों का व्यवसाय

		प्रधान व्यवसाय					सहायक व्यवसाय					
क्र. सं.	जाति	मजदूरी	कृषि	नौकरी	जाति पेशा	व्यापार	मजदूरी	कृषि	नौकरी	जाति पेशा	व्यापार	कुल
1	ब्राह्मण	0	6	4	3	1	0	4	0	6	0	14
2	राजपूत	0	8	6	0	1	0	8	0	0	0	15
3	भूमिहार	0	16	9	0	4	0	14	0	0	3	29
4	यादव	4	8	3	7	3	6	8	0	10	0	25
5	कोयरी	3	24	12	0	4	5	17	0	0	6	43
6	कुर्मी	5	23	6	0	5	6	10	0	0	1	39
7	दुसाध	39	4	2	0	3	9	2	0	0	0	47
8	चमार	23	2	3	7	0	10	0	0	16	0	44
9	मुसहर	94	0	1	0	3	15	0	0	0	0	98

श्रोत– डॉ0 रविन्द्रनाथ के शोध मतबन्ध 'ग्रामीण गया जिला में जाति के बदलते स्वरूप' मगध विश्वविद्यालय बोधगया को समर्पित से उद्धृत।

तालिका के सुक्ष्म विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि ब्राह्मण जाति के 14 परिवार प्रधानों में 6, 4, 3 एवं 1 ऐसे हैं जो क्रमशः खेती, नौकरी, जाति व्यवसाय एवं व्यापार करते हैं, जबकि सहायक पेशा के रू॰ में 4 कृषि तथा 6 जाति व्यवसाय करते हैं। राजपूत जाति के 15 परिवार प्रधानों में से 8, 6 एवं 1 ऐसे हैं जो क्रमशः खेती नौकरी और व्यापार करते हैं। उसी प्रकार भूमिहार जाति के 26 परिवार प्रधानों में से 16, 9 एवं 4 ऐसे हैं, जिनका प्रधान व्यवसाय क्रमशः खेती, नौकरी एवं व्यापार है। जबकि 14 एवं 3 ऐसे हैं जो सहायक व्यवसाय के रूप में कृषि एवं व्यापार को अपनाये हुए हैं। यादव जाति के 25 परिवार प्रधानों में से मजदूरी खेती, नौकरी जाति व्यवसाय और व्यापार करने वाले क्रमशः 4, 8, 3, 7 एवं 3 हैं। दूसरी ओर सहायक पेशा के रूप में 6 मजदूरी 8 कृषि तथा 10 जाति व्यवसाय अपनाये हुए हैं। कोयरी जाति के 43 परिवार प्रधानों में 3, 24, 12 एवं 4 क्रमशः मजदूरी, खेती, नौकरी एवं व्यापार को अपना प्रधान व्यवसाय बनाये हुए हैं जबकि 5 मजदूरी 17 कृषि तथा 6 व्यापार को सहायक व्यवसाय स्वीकार करते हैं। कुर्मी जाति के 39 परिवार प्रधानों में 23, 6 एवं 5, ऐसे हैं, जो क्रमशः खेती, नौकरी, मजदूरी तथा व्यापार में लगे हुए हैं, जबकि 6, 10 एवं 1 ऐसे है जो सहायक व्यवसाय के रूप में क्रमशः मजदूरी, कृषि एवं व्यापार को अपनाये हुए हैं। दुसाध जाति के 47 परिवार प्रधानों में 38, 4, 3 एवं 2 क्रमशः मजदूरी, खेती, व्यापार तथा नौकरी को अपना प्रधान व्यवसाय मानते हैं, जबकि सहायक व्यवसाय के रूप में 9 मजदूरी तथा 2 कृषि कार्य को मानते हैं। चमार जाति के 44 परिवार प्रधानों में 32, 2, 3 तथा 7 क्रमशः मजदूरी, कृषि, नौकरी तथा जाति व्यवसाय प्रधान व्यवसाय मानते हैं जबकि सहायक व्यवसाय के रूप में 10 मजदूरी तथा 16 जाति पेशा को स्वीकार करते हैं। उसी प्रकार मुसहर जाति के 98 परिवार प्रधानों में 94 मजदूरी 1 नौकरी तथा 3 व्यापार को अपना प्रधान व्यसाय मानते हैं। जबकि 15 मजदूरी को सहायक व्यवसाय मानते हैं।

जी0एस0 घुरिए[10] ने जाति व्यवस्था की विशेषताओं में व्यवसाय के स्वतंत्र चुनाव पर प्रतिबंधों का उल्लेख किया है।

उपर्युक्त सम्पूर्ण विश्लेषण से स्पष्ट है कि अभी भी उच्च जाति के लोग शारीरिक श्रम साध्य व्यवसाय बहुत कम करते हैं। जबकि मध्य एवं निम्न जातियाँ क्रमशः अधिक। आज भी गाँव में अनुसूचित जातियाँ अधिकांशतः मजदूरी पर निर्भर करती है। कुछ बटाई पर खेती करती है जबकि नौकरी, व्यापार एवं जाति स्वतंत्र पेशा में उनकी संख्या कम है। वे जाति पेशा को सहायक व्यवसाय के रूप में स्वीकार करते हैं। पिछड़ी जातियां अधिकांशतः खेती, व्यापार स्वतंत्र व्यवसाय एवं नौकरी करती है। उच्ची जातियां कृषि एवं नौकरी में अपेक्षाकृत सर्वाधिक हैं। इनसाइक्लोपेडिया ऑफ ब्रिटेनिका खण्ड 11 में जाति के संबंध में यह स्पष्ट किया गया है कि विभिन्न जातियों में व्यवसाय को अपनाने के संबंध में कुछ नियम है, लेकिन कृषि एक ऐसा पेशा है, जिसे अपनाने के लिए सभी स्वतंत्र है, क्योंकि यह काफी पवित्र एवं तटस्थ पेशा माना गया है। यह सत्य है कि कई कारणों से जाति एवं पेशा में गतिशीलता बढ़ी है, लेकिन उसकी गति अभी भी ग्रामीण क्षेत्रों में कम है, क्योंकि वहाँ प्रभुत्वशाली उच्ची एवं मध्य जातियां अन्य पिछड़ी एवं निम्न जातियों पर प्रतिबन्ध बनाये हुए है। इसके बावजूद कई जाति वाले अशुद्ध समझे जाने वाले जाति व्यवसाय का परित्याग करने लगे हैं और बाधक जातियों के विरूद्ध संगठित होकर उचित सम्मान के लिए संघर्ष करने लगे हैं, जिसकी अभिव्यक्ति हिंसात्मक रूप में भी देखने को मिल जाता है। इसके बावजूद

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-11, No.-II, Issues-14 YEAR- Dec. -2019

अभी ग्रामीण समाज में जाति एवं व्यवसाय में सह संबंध बना हुआ है।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1. मैकाइवर एण्ड पेज, सोसायटीः ऐन इन्ट्रोडक्टरी एनालिसिस, मैक्मीलन एण्ड कम्पनी, लंदन, 1965, पृ0सं0– 356
2. नेसफील्ड, जे0सी0, ब्रीफ व्यू ऑफ द कास्ट सिस्टम, ऑफ द नार्थ वेस्टर्न प्रोविंस एण्ड अवध, नार्थ–स्टर्न प्रोविन्सिस एण्ड अवध गवर्नमेंट प्रेस इलाहाबाद, पृ0सं0– 7
3. ब्लन्ट, ई० ए०एच०–1931 'दि काष्टसीस्टम ऑफ नादर्न इण्डिया' ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 1931, पृ0सं0– 169
4. मेयर, ए० सी०– 1960 'करस्ट एण्ड कीन्शीप इन सेन्ट्रल इण्डियाः ए भीलेज एण्ड रीजन' यूनिवर्सीटी ऑफ कैलिफोर्निया प्रेस, पृ0सं0– 107
5. दूबे, एस० सी०– 1955 'इण्डियन वीलेज' राउतलेम एण्ड केमन पाउल, लंदन। पृ0सं0– 92
6. शर्मा, के0 एन0–1980 'एसे ऑन सोशल स्टेटिफिकेशन', जयपुर, रावत पब्लिकेशन, पृ0सं0– 6–11
7. भटट्, अनिल–1975 'कास्ट क्लारा एण्ड पोलिटिक्स' दिल्ली मनोहर बुक सर्विस पृ0सं0– 73
8. तिवारी, एस० एन०– 1989 'डाइनेमिक्स ऑफ कास्ट इन रूरल बिहार' एल० एन० मि० यूनिवर्सिटी प्रेस, दरभंगा, पृ0सं0– 155
9. सिंह, रणजीत–1990 'सम आस्पेक्ट ऑफ कास्ट इन मिथिलाः ए स्टडी इन चेन्ज एण्ड कन्टीन्यूटी' पी–एच० डी० थिसीस। (अप्रकाशित) एल० एन० मि० यू०, दरभंगा, पृ0सं0– 104
10. घूरिये, जी0एस0 कास्ट क्लास एण्ड आकुपेशन 1961 पोपुलर बुक डिपो, बाम्बे, पृ0सं0– 26–27

*****